विरेंदर वीर मेहता

ई-मेल:v.mehta67@gmail.com

मैं भला आदमी

हर गुजरते स्टेशन पर यात्रियों का चढ़ना-उतरना 'ई एम यू' की अपनी ख़ासियत है, जो अनजाने में एक कमी का अहसास भी कराती है। और इसी कमी का फ़ायदा अक़्सर मेरे जैसे लोग उठाते हैं। आज भी पिछले कई स्टेशन से सीट के नीचे पड़े एक ब्रीफ़केस पर मेरी नज़रें लगी हुई थीं। भीड़ ज़्यादा नहीं तो इतनी कम भी नहीं थी कि आसपास के यात्रियों पर ध्यान रखा जाए। हालाँकि यह पक्का नहीं था कि ब्रीफ़केस का मालिक डिब्बे में ही है, या भूल से अपना सामान छोड़ कहीं उतर गया है; बहरहाल ट्रेन आख़िरी स्टेशन की ओर बढ़ रही थी और मेरा दिमाग़ अपनी प्लानिंग पूरी कर चुका था।

आख़िरी स्टेशन आते-आते ट्रेन की स्पीड धीमी हो गई और मैंने ब्रीफ़केस उठाने के लिए अपना हाथ बढ़ा दिया, कि ठीक उसी समय दरवाजे के पास खड़े मेरे हम-उम्र आदमी ने मुझे पुकारा।

"भाई, तुम्हारी सीट के नीचे मेरा ब्रीफ़केस पड़ा है, जरा उठाकर मेरी ओर बढ़ा दोगे।"

एक ही पल में मेरी योजना धराशाई हो गई। मायूस होकर मैंने उसकी अमानत उसे देने के लिए ब्रीफ़केस को उठाया ही था कि अनायास ही मेरे दिमाग़ में एक बात कौंध गई, और मैं कुछ तेज आवाज़ में बोल उठा, "लेकिन भाई, तुम तो पीछे ओखला स्टेशन से ही चढ़े हो न; फिर ये ब्रीफ़केस तुम्हारा कैसे हो सकता है?"

मेरी आवाज़ के उत्तर में ही पास ही खड़े एक और यात्री की तेज आवाज़ डिब्बे में गूंज गई—"चोर है साला, ऐसे ही दूसरों का सामान ले जाते हैं ये लोग। पकड़ो इसे।"

उसके इतना कहते ही, एक-साथ दो बातें हुईं। पहली, दरवाज़े के पास खड़ा वह यात्री धीमी होती ट्रेन से कूदकर भाग निकला। और दूसरी, जाने कहाँ से डिब्बे की भीड़ में से ब्रीफ़केस का असली मालिक निकलकर सामने आ खड़ा हुआ और...

"आज तो तुमने बचा लिया मेरा सामान भाई, वरना मैं तो लुट जाता। मेहरबानी भाई, तुम जैसे भले लोगों से ही यह दुनिया चल रही है।" कहते हुए वह ब्रीफ़केस लेकर यात्रियों के बीच उतर गया; और पीछे ख़ाली डिब्बे में खड़ा रह गया मैं अकेला... भला आदमी।

विरेंदर वीर मेहता

अघोषित अपराधी

ये पहली बार नहीं था जब माँ की नींद देर रात खुल गई और वह हड़बड़ाकर मुझे बुलाने लगी।

"राज, ओ बेटा राज, देख तो तेरे पिता कहाँ हैं? उनकी दवाई का टाईम हो गया है, कहीं भूल तो नहीं गई मैं ?"

हम इस बात के अब आदी होने लगे थे, लेकिन हमारे पास आए एक मित्र के लिए यह थोड़ा अप्रत्याशित था। वह कुछ कहता, इससे पहले ही मेरी जीवनसंगिनी माँ को बहलाते हुए, "अरे माँजी, अभी सोने से पहले आपको बताया तो था कि बाबूजी को दवाई दे दी है और वह सोए हुए हैं।" उनके पास चली गई।

मित्र के प्रश्नचिन्ह बने चेहरे को देखते हुए मैंने सफाई देनी चाही—"अरे, वो नींद में उठ गई हैं न। वैसे अम्मा नॉर्मल हैं और उन्हें बाबूजी के जाने की भी जानकारी है। उस दिन भी उनके पास अम्मा ही थी, जब उनकी तबियत बिगड़ी और अस्पताल में भी अन्तिम समय तक अम्मा ही उनके साथ थी।"

"फ़िर अभी-अभी ये जो... !" मित्र ने अपनी बात अधूरी छोड़ दी।

"दरअसल, ठीक से तो हमारी समझ में भी नहीं आया, पर अम्मा को कभी-कभी रात में ऐसा होता है, बाकी समय तो वह नॉर्मल ही रहती हैं।" अनचाहे ही 'नॉर्मल' शब्द पर मेरा ज़्यादा जोर था।

"समझने जैसी कोई बात नहीं है दोस्त।" मेरी बात के उत्तर में वह एकाएक गंभीर हो गया, "यह सिर्फ़ और सिर्फ़ अवचेतन मस्तिष्क की स्थिति है, जो जागृत अवस्था में भले ही पेशेंट को परेशान नहीं करती लेकिन अक़्सर गहरी सुप्तावस्था में जरूर विचलित कर देती है।"

"पेशेंट... क्या कहना चाहते हो यार?"

"कुछ ख़ास नहीं, बस उस रात अम्मा सच में बाबूजी को दवाई देना भूल गई थी।"

अनायास ही हमारे बीच गहरी चुप्पी छा गई और अम्मा पल भर में एक मरीज़ के साथ-साथ अघोषित अपराधी भी बन गईं।